चौबीस तीर्थंकर आदि सात पूजा

अनादिनिधन णमोकार महामंत्र एवं चत्तारि मंगल पाठ

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।

चत्तारि मंगलं—अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहु मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

चौबीस तीर्थंकर स्तुति

–शंभु छंद–

सिद्धीप्रद चौबिस तीर्थंकर, वर पंचकल्याणक के स्वामी।
स्वर्गावतार के छह महिने, पहले सुरपति आज्ञा मानी।।
धनपति रत्नों को वर्षाकर, सारे जग का दारिद धोवें।
जिनवर का गर्भकल्याणक यह, जन-जन में मंगलकर होवे।।1।।

श्री आदि देवि से सेवित माँ, तीर्थंकर की जननी होतीं।
इन्द्राणी जिनशिशु को लेकर, अतिहर्षित मन पुलकित होतीं।।
मेरू पर एक हजार आठ, कलशों से जिन अभिषव होवे।
यह जन्म कल्याणक जिनवर का, सब जन को मंगलप्रद होवे।।2।।

बारह भावन भाते ही तो, लौकांतिक सुर आ जाते हैं।
सुरनिर्मित शिविका पर चढ़कर, तीर्थंकर वन में जाते हैं।।
"सिद्धेभ्यो नमः" मंत्रपूर्वक, दीक्षा ले निज में रत होवें।
दीक्षा कल्याणक जिनवर का, हम सबको मंगलप्रद होवे।।3।।

प्रभु घात घातिया केवलरवि, भू से पण सहस धनुष ऊपर।
वर समवसरण में कमलासन पर, अधर विराजें तीर्थंकर।।
द्वादशगण दिव्यध्वनी सुनकर, निज आत्मा का अघमल धोवें।
यह केवलज्ञान कल्याणक भी, हम सबको मंगलप्रद होवे।।4।।

प्रभु श्रीविहार का अंत समय, सब योग निरोध अयोगि बनें।
ध्यानाग्नी में कर्मेन्धन को, भस्मीकर शिवपति सिद्ध बनें।।
तीर्थंकर की अतिशय भक्ती, निजसौख्य सुधारस प्रद होवे।
निर्वाण कल्याणक जिनवर का, हम सबको मंगलप्रद होवे।।5।।

पूजा नं. १

चौबीस तीर्थंकर पूजा

–अथ स्थापना-शंभु छंद –

पुरुदेव आदि चौबिस तीर्थंकर, धर्मतीर्थ करतार हुये।
इस जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के, आर्यखंड में नाथ हुये।।
इन मुक्तिवधू परमेश्वर का, हम भक्ती से आह्वान करें।
इनके चरणाम्बुज को जजते, भव भव दुःखों की हानि करें।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक-गीता छंद –

हे नाथ! मेरी ज्ञानसरिता, पूर्ण भर दीजे अबे।
इस हेतु जल से आप के, पदकमल को पूजूँ अबे।।
चौबीस तीर्थंकर जिनेश्वर, की करूँ मैं अर्चना।
इन पूजते निजसौख्य पाऊँ, करूँ यम की तर्जना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म में सम्पूर्ण शीतल, सलिल धारा पूरिये।
तुम चरण युगल सरोज में, चंदन चढ़ाऊँ इसलिए।।चौबीस.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अखंडित सौख्य निधि, भंडार भर दीजे प्रभो।
इस हेतु अक्षत पुंज से, मैं पूजहूँ तुम पद विभो।।चौबीस.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझ आत्मगुण सौगंध्य सागर, पूर्ण भर दीजे प्रभो।
इस हेतु मैं सुरभित सुमन ले, पूजहूँ तुम पद विभो।।
चौबीस तीर्थंकर जिनेश्वर, की करूँ मैं अर्चना।
इन पूजते निजसौख्य पाऊँ, करूँ यम की तर्जना।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरी करो परिपूर्ण तृप्ती, आत्म सुख पीयूष से।
भगवन्! अतः नैवेद्य से, पूजूँ चरण युग भक्ति से।।चौबीस.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ज्ञान ज्योती मुझ हृदय में, पूर्ण भर दीजे अबे।
मैं आरती रुचि से करूँ, अज्ञानतम तुरतहिं भगे।।चौबीस.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझ आत्मयश सौरभ गगन में, व्याप्त कर दीजे प्रभो।
इस हेतु खेऊँ धूप मैं, कटुकर्म भस्म करो विभो।।चौबीस.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्मगुण संपत्ति को, अब पूर्ण भर दीजे प्रभो।
इस हेतु फल को मैं चढ़ाऊँ, आपके सन्निध विभो।।चौबीस.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अनमोल गुण निज के अनंते, किस विधी से पूर्ण हों।
बस अर्घ्य अर्पण करत ही, निज "ज्ञानमति" सुख पूर्ण हो।।चौबीस.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

तीर्थंकर चरणाब्ज में, धारा तीन करंत।
त्रिभुवन में भी शांति हो, निजगुण मणि विलसंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

जिनवर चरण सरोज में, सुरभित कुसुम धरंत।
सुख संतति संपति बढ़े, आत्म सौख्य विलसंत।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य– **ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवर्धमानान्तेभ्यो नमः।**

जयमाला

–चौबोल छंद–

आवो हम सब करें वंदना, चौबीसों भगवान की।
तीर्थंकर बन तीर्थ चलाया, उन अनंत गुणवान की।।
जय जय जिनवरं-4
आदिनाथ युग आदि तीर्थंकर, अजितनाथ कर्मारि हना।
संभवजिन भव दुःख के हर्ता, अभिनंदन आनंद घना।।
सुमतिनाथ सद्बुद्धि प्रदाता, पद्मप्रभु शिवलक्ष्मी दें।
श्री सुपार्श्व यम पाश विनाशा, चन्द्रप्रभू निज रश्मी दें।।
केवलज्ञान सूर्य बन चमके, त्रिभुवन तिलक महान की।। तीर्थं.।।1।।
जय जय जिनवरं-4
पुष्पदंत भव अंत किया है, शीतल प्रभु के वच शीतल।
श्री श्रेयांस जगत हित कर्ता, वासुपूज्य छवि लाल कमल।।
विमलनाथ ने अघ मल धोया, जिन अनंत गुण अन्तातीत।
धर्मनाथ वृषतीर्थ चलाया, शांतिनाथ शांतिप्रद ईश।।
शांतीच्छुक जन शरण आ रहे, ऐसे करुणावान की।।तीर्थं.।।2।।
जय जय जिनवरं-4

कुंथुनाथ करुणा के सागर, अर जिन मोह अरी नाशा।
मल्लिनाथ यममल्ल विजेता, मुनिसुव्रत व्रत के दाता।।
नमिप्रभु नियम रत्नत्रय धारी, नेमिनाथ शिवतिय परणा।
पार्श्वनाथ उपसर्ग विजेता, महावीर भविजन शरणा।।
इनने शिव की राह दिखाई, जन-जन के कल्याण की।।तीर्थं.।।3।।
जय जय जिनवरं-4

तीर्थंकर के जन्म समय से, दश अतिशय श्रुत में गाये।
केवलज्ञान प्रगट होते ही, दश अतिशय गणधर गायें।।
देवोंकृत चौदह अतिशय हों, सुंदर समवसरण रचना।
इन्द्र-इन्द्राणी देव-देवियाँ, गाते रहते गुण गरिमा।।
सभी भव्य गुण कीर्तन करते, अभयंकर जिननाम की।।तीर्थं.।।4।।
जय जय जिनवरं-4

तरु अशोक सुरपुष्पवृष्टि, भामंडल चामर सिंहासन।
तीन छत्र सुरदुंदुभि बाजे, दिव्यध्वनी है अमृतसम।।
आठ महा ये प्रातिहार्य हैं, गंधकुटी में प्रभु शोभें।
विभव वहाँ का सुर नर पशु क्या, मुनियों का भी मन लोभे।।
गणधर गुरु भी संस्तुति करते, अविनश्वर भगवान की।।तीर्थं.।।5।।
जय जय जिनवरं-4

दर्शन ज्ञान सौख्य वीरज ये, चार अनंत चतुष्टय हैं।
ये छ्यालिस गुण अर्हंतों के, फिर भी गुणरत्नाकर हैं।।
क्षुधा तृषादिक दोष अठारह, प्रभु के कभी नहीं होते।
वीतराग सर्वज्ञ तीर्थंकर, हित उपदेशी ही होते।।
परम पिता परमेश्वर स्वामिन्! पूजा कृपानिधान की।।तीर्थं.।।6।।
जय जय जिनवरं-4

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवर्धमानान्त्यचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–सोरठा –

धर्मचक्र के नाथ, द्विविध धर्मकर्ता प्रभो।
नमूँ नमाकर माथ, ''ज्ञानमती'' कलिका खिले।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. २

भगवान श्री ऋषभदेव पूजा

स्थापना– गीता छंद

हे आदिब्रह्मा! युगपुरुष! ऋषभेश! युगस्रष्टा तुम्हीं।
युग आदि में इस कर्मभूमी, के प्रभो! कर्ता तुम्हीं।।
तुम ही प्रजापतिनाथ! मुक्ती के विधाता हो तुम्हीं।
मैं आपका आह्वान करता, नाथ! अब तिष्ठो यहीं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक –चाल –नंदीश्वर पूजा

जिनवच सम शीतल नीर, कंचन भृंग भरूँ।
जिन चरणांबुज में धार, दे जगद्वंद्व हरूँ।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनतनु सम सुरभित गंध, सुवरण पात्र भरूँ।
जिनचरण सरोरुह चर्च, भव संताप हरूँ।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन गुणसम उज्ज्वल धौत, अक्षत थाल भरे।
जिन चरण निकट धर पुंज, अक्षय सौख्य भरे।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनयशसम सुरभित श्वेत, कुंद गुलाब लिये।
मदनारिजयी जिनपाद, पूजूँ हर्ष हिये।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवचनामृत सम शुद्ध, व्यंजन थाल भरे।
परमामृत तृप्त जिनेन्द्र, पूजत भूख टरे।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरभेद ज्ञान सम ज्योति,जगमग दीप लिये।
जिनपद पूजत ही होत, ज्ञान उद्योत हिये।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध सुगंधित धूप, खेवत कर्म जरे।
निज आतम गुण सौगंध्य, दश दिश माहिं भरे।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन ध्वनिसम मधुर रसाल, आम अनार भले।
जिनपद पूजत तत्काल, फल सर्वोच्च मिले।।

श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले अष्ट द्रव्य का थाल, अर्घ्य सम चढ़ाऊँ मैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' हेतु, तुम गुण गाऊँ मैं।।
श्री ऋषभदेव तीर्थेश, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमको क्षेमंकर।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा –

सरयूनदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
शीघ्र हरो भव पीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
आदीश्वर पादाब्ज, पूजत ही सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक अर्घ्य

–शंभु छंद –

यह पुरी अयोध्या इंद्र रचित, चौदहवें कुलकर नाभिराज।
माता मरुदेवी के आँगन, बहु रत्न वृष्टि की धनदराज।।
आषाढ़ वदी द्वितीया सर्वारथ, सिद्धी से अहमिंद्र देव।
माता के गर्भ बसे आकर, इंद्रों ने की पितु मात सेव।।1।।

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णाद्वितीयायां श्रीऋषभदेवगर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री ह्री धृति आदि देवियों ने, माता की सेवा भक्ती की।
नाना विध गूढ़ प्रश्न करके, माता की अतिशय तृप्ती की।।

शुभ चैत्र वदी नवमी जन्में, प्रभु त्रिभुवन में अति हर्ष हुआ।
इन्द्रों ने आ प्रभु को लेकर, मेरू पर अतिशय न्हवन किया।।2।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां श्रीऋषभदेवजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुदेव निलांजना नृत्य देख, वैराग्यभाव मन में लाये।
लौकांतिक सुर स्तुति करते, सुर सुदर्शना पालकि लाये।।
नक्षत्र उत्तराषाढ़ चैत वदि, नवमी प्रभु सिद्धार्थ वन में।
छह मास योग ले दीक्षा ली, मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ प्रभु पद में।।3।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां श्रीऋषभदेवदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छह मास योग के बाद प्रभू, मुनिचर्या बतलाने निकले।
गजपुर में अक्षयतृतिया को, आहार दिया श्रेयांस मिले।।
इक सहस वर्ष तप तपने से, केवलज्ञानी होकर चमके।
दिव्यध्वनि से जग संबोधा, फाल्गुन वदि एकादशि तिथि के।।4।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां श्रीऋषभदेवकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बारह विध सभा बनी सुंदर, मुनि आर्या सुरनर पशुगण थे।
प्रभु समवसरण में वृषभसेन, आदिक चौरासी गणधर थे।।
तीजे युग में त्रय वर्ष सार्ध, अरु मासशेष अष्टापद से।
चौदह दिन योग निरुद्ध माघ, वदि चौदश के प्रभु मुक्ति बसे।।5।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीऋषभदेवमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य (दोहा) –

चिन्मय चिन्तामणि प्रभो! ऋषभदेव भगवान।
पूर्ण अर्घ्य लेकर जजूँ, मिले सिद्ध स्थान।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथपंचकल्याणकाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवजिनेन्द्राय नमः।

जयमाला

–दोहा –

तीर्थंकर गुण रत्न को, गिनत न पावें पार।
तीन रत्न के हेतु मैं, नमूँ अनंतों बार।।1।।

–शंभु छंद –

श्री वृषभसेन आदिक चौरासी, गणधर मुनि चौरासि सहस।
ब्राह्मी गणिनी त्रय लाख पचास, हजार आर्यिका व्रतसंयुत।।
त्रय लाख सुश्रावक पाँच लाख, श्राविका प्रभू का चउ संघ था।
आयू चौरासी लाख पूर्व, वत्सर व पाँच सौ धनु तनु था।।2।।

– अनंग शेखर छंद–

जयो जिनेन्द्र! आपके महान दिव्य ज्ञान में,
त्रिलोक और त्रिकाल एक साथ भासते रहे।
जयो जिनेन्द्र! आपका अपूर्व तेज देखके,
असंख्य सूर्य और चंद्रमा भि लाजते रहे।।
जयो जिनेन्द्र! आपकी ध्वनी अनच्छरी खिरे,
तथापि संख्य भाषियों को बोध है करा रही।
जयो जिनेन्द्र! आपका अचिन्त्य ये महात्म्य देख,
सुभक्ति से प्रजा समस्त आप आप आ रही।।3।।

जिनेश! आपकी सभा असंख्य जीव से भरी,
अनंत वैभवों समेत भव्य चित्त मोहती।
जिनेश! आपके समीप साधु वृंद औ गणीन्द्र,
केवली मुनीन्द्र और आर्यिकायें शोभतीं।।
सुरेन्द्र देवियों की टोलियाँ असंख्य आ रही,
खगेश्वरों की पक्तियाँ अनेक गीत गा रहीं।
सुभूमि गोचरी मनुष्य नारियाँ तमाम हैं,
पशू तथैव पक्षियों कि टोलियाँ भी आ रहीं।।4।।

सुबारहों सभा स्वकीय ही स्वकीय में रहें,
असंख्य भव्य बैठ के जिनेश देशना सुनें।
सुतत्त्व सात नौ पदार्थ पाँच अस्तिकाय और,
द्रव्य छह स्वरूप को भले प्रकार से गुनें।।
निजात्म तत्त्व को संभाल तीन रत्न से निहाल,
बार-बार भक्ति से मुनीश हाथ जोड़ते।
अनंत सौख्य में निमित्त आपको विचार के,
अनंत दुःख हेतु जान कर्मबंध तोड़ते।।5।।

स्वमोह बेल को उखाड़ मृत्युमल्ल को पछाड़,
मुक्ति अंगना निमित्त लोक शीश जा बसें।
प्रसाद से हि आपके अनंत भव्य जीव राशि,
आपके समान होय आप पास आ लसें।।
असंख्य जीव मात्र दृष्टि समीचीन पायके,
अनंतकाल रूप पंच परावर्त मेटते।
सुभक्ति के प्रभाव से असंख्य कर्म निर्जरा,
करें अनंत शुद्धि से निजात्म सौख्य सेवते।।6।।

–दोहा –

वृषभ चिह्न स्वर्णिम तनू, प्रथम तीर्थकर आप।
'ज्ञानमती' सुख शांति दे, करो हमें निष्पाप।।7।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवतीर्थंकराय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

–दोहा –

नाथ! आप गुणसिंधु हैं, को कहि पावे पार।
नाममंत्र ही आपका, करे भवोदधि पार।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. ३

तीन लोक जिनालय पूजा

-दोहा-

त्रिभुवन के जिनमंदिर शाश्वत, आठ कोटि सुखराशी।
छप्पन लाख हजार सत्यानवे, चार शतक इक्यासी।।
प्रति जिनगृह में मणिमय प्रतिमा, इक सौ आठ विराजें।
आह्वानन कर जजूँ यहाँ मैं, जन्म-मरण दुःख भाजें।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अष्टक-स्रग्विणी छंद –

स्वर्ण गंगानदी नीर झारी भरूँ।
नाथ के पाद में तीन धारा करूँ।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध चंदन घिसा के कटोरी भरूँ।
नाथ पादाब्ज अर्चूं सभी दुःख हरूँ।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।2।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धौत तंदुल शशी रश्मि सम श्वेत हैं।
नाथ के अग्र में पुंज सुख हेतु हैं।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।3।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद बेला सुगंधित कुसुम ले लिए।
नाथ पादाब्ज में आज अर्पण किए।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।4।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खीर बरफी अंदरसा पुआ लाय के।
नाथ के सामने चरु चढ़ाऊँ अबे।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।5।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप ज्योती लिए आरती मैं करूँ।
मोह हर ज्ञान की भारती मैं भरूँ।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।6।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेऊँ अबे धूपघट में जले।
कर्म निर्मूल हो देहकांती मिले।।

सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।7।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र अंगूर केला चढ़ाऊँ भले।
मोक्ष की आश सह सर्व वांछित फले।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।8।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ में स्वर्ण चाँदी कुसुम ले लिए।
नाथ को अर्पहूँ रत्नत्रय के लिए।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊँ बड़े चाव से।।9।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

श्रीजिनवर पादाब्ज, शांतीधारा मैं करूँ।
मिले स्वात्मसाम्राज्य, त्रिभुवन में सुख शांति हो।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला हरसिंगार, कुसुमांजलि अर्पण करूँ।
मिले सर्वसुखसार, त्रिभुवन की सुखसंपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रैलोक्यजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।

जयमाला

-दोहा-

जय त्रिभुवन के जिनभवन, जिनप्रतिमा जिनसूर्य।
नमूँ अनंतों बार मैं, भव्य कमलिनी सूर्य।।1।।

-शंभु छंद-

जय अधोलोक के जिनगृह सात, करोड़ बहत्तर लाख नमूँ।
जय मध्यलोक के चार शतक, अट्ठावन जिनगृह नित्य नमूँ।।
जय व्यंतरसुर ज्योतिष सुर के, जिनगेह असंख्याते प्रणमूँ।
जय ऊरध के चौरासि लाख, सत्यानवे सहस तेईस नमूँ।।1।।

कोट्यष्ट सुछप्पन लाख सत्यानवे, सहस चार सौ इक्यासी।
जिनधाम अकृत्रिम नमूँ-नमूँ ये, कल्पवृक्षसम सुख राशी।।
नव सौ पचीस कोटी त्रेपन्न, लाख सत्ताइस सहस तथा।
नवसौ अड़तालिस जिनप्रतिमा, मैं नमूँ हरो भवव्याधि व्यथा।।2।।

जिनमंदिर लंबे सौ योजन, पचहत्तर तुंग विस्तृत पचास।
उत्कृष्ट प्रमाण कहा श्रुत में, मध्यम लंबे योजन पचास।।
चौड़े पचीस ऊँचे साढ़े, सैंतिस जघन्य लंबे पचीस।
चौड़े साढ़े बारह योजन, ऊँचे योजन पौने उनीस।।3।।

मेरू में भद्रसाल नंदनवन, के वर द्वीप नंदीश्वर के।
उत्कृष्ट जिनालय मुनि कहते, मैं नमूँ-नमूँ अंजलि करके।।
सौमनस रुचकगिरि कुंडलगिरि, वक्षार कुलाचल के मंदिर।
मनुजोत्तर इष्वाकार अचल, मध्यम प्रमाण के जिनमंदिर।।4।।

पांडुकवन के जिनगृह जघन्य, मैं नमूँ-नमूँ शिरनत करके।
रजताचल जंबू शाल्मलि तरु, इनके मंदिर सबसे छोटे।।
ये एक कोस लंबे आधे, चौड़े पोने कोस ऊँचे हैं।
सर्वत्र लघू जिनमंदिर का, परिमाण यही मुनि गाते हैं।।5।।

जिनगृह को बेढ़े तीन कोट, चहुँदिश में गोपुर द्वार कहें।
प्रतिवीथी मानस्तंभ बने, प्रतिवीथी नव-नव स्तूप कहें।।
मणिकोट प्रथम के अंतराल, वन भूमि लतायें मन हरतीं।
परकोट द्वितिय के अंतराल, दशविधी ध्वजायें फरहरतीं।।6।।

परकोट तृतिय के बीच चैत्यभूमी अतिशायि शोभती है।
सिद्धार्थवृक्ष अरु चैत्यवृक्ष, बिंबों के चित्त मोहती है।।
प्रतिमंदिर मध्य गर्भगृह, इकसौ आठ-आठ अतिसुंदर हैं।
इन गर्भगृह में सिंहासन पर, जिनवरबिंब मनोहर हैं।।7।।

ये बिंब पाँचसौ धनुष तुंग, पद्मासन राजें मणिमय हैं।
बत्तीस युगल यक्ष दोनों, बाजू में चंवर ढुराते हैं।।
जिनप्रतिमा निकट श्रीदेवी, श्रुतदेवी की मूर्ती शोभें।
सानत्कुमार सर्वाण्हयक्ष की, मूर्ति भव्य जनमन लोभें।।8।।

प्रत्येक बिंब के पास सुमंगल, द्रव्य एक सौ आठ-आठ।
भृंगार कलश दर्पण चामर ध्वज, छत्र व्यजन अरु सुप्रतिष्ठ।।
श्रीमंडप आगे स्वर्ण कलश, शोभें बहु धूप घड़े सोहें।
मणिमय सुवर्णमय मालायें, चारण ऋषि का भी मन मोहें।।9।।

मुखमंडप प्रेक्षामंडप अरु, वंदन अभिषेक मंडपादी।
क्रीड़ा नर्तन संगीत गुणनगृह, चित्रभवन विस्तृत अनादि।।
बहुविध रचना इन मंदिर में, गणधर भी नहिं कह सकते हैं।
माँ सरस्वती नित गुण गाएँ, मुनिगण अतृप्त ही रहते हैं।।10।।

मैं नित्य जिनालय को वंदूँ, नित शीश झुकाऊँ गुण गाऊँ।
जिनप्रतिमा के पद कमलों में, बहुबार नमूँ नित शिर नाऊँ।।
प्रत्यक्षदर्श मिल जाय प्रभो! इसलिये परोक्ष करूँ वंदन।
निज 'ज्ञानमती' ज्योति प्रगटे, इस हेतु करूँ शत-शत वंदन।।11।।

-दोहा-

चिंतामणि जिनमूर्तियाँ, चिंतित फल दातार।
चिच्चैतन्य जिनेन्द्र को, नमूँ-नमूँ शत बार।।12।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति जिनालयजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-गीता छंद-

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से, त्रैलोक्य जिन पूजा करें।
सब रोग शोक विनाश कर, भवसिंधु जल सूखा करें।।
चिंतामणी चिन्मूर्ति को, वे स्वयं में प्रगटित करें।
''सुज्ञानमति'' रविकिरण से, त्रिभुवन कमल विकसित करें।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. ४

तीस चौबीसी पूजा

-गीता छंद-

मंगलमयी सब लोक में उत्तम शरण दाता तुम्हीं।
वर तीस चौबीसी जिनेश्वर सात शत औ बीस ही।।
नर लोक में ये भूत संप्रति भावि तीर्थंकर कहे।
पण भरत पण ऐरावतों में पंचकल्याणक लहें।।1।।

-दोहा-

आवो आवो नाथ! अब यहाँ विराजो आन।
आह्वानन विधि से सदा मैं पूजूँ अघ हान।।2।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थाननं।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

-अष्टक-स्रग्विणी छंद-

सिंधु को नीर भृंगार में लाय के।
धार देऊँ प्रभो पाद में आय के।।
तीस चौबीस तीर्थंकरों को जजूँ।
जन्म व्याधी हरूँ सर्व दुःख से बचूँ।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध सौगंध्य कर्पूर केशर मिली।
पाद चर्चंत सम्यक्त्व कलिका खिली।।तीस.।।2।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दुग्ध के फेन सम स्वच्छ अक्षत लिये।
पुंज को धारने स्वात्म संपत लिये।।तीस.।।3।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

केवड़ा मोगरा पुष्प अरविंद हैं।
नाथ पद पूजते काम शर भंग हैं।।।तीस.।।4।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मुद्गलाडू इमरती कनक थाल में।
पूजते भूखव्याधी हरूँ हाल में।।तीस.।।5।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण के पात्र में ज्योति कर्पूर की।
नाथ की आरती मोह को चूरती।।तीस.।।6।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशगंध ले अग्नि में खेवते।
कर्म की भस्म हो नाथ पद सेवते।।तीस.।।7।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम अंगूर केला अनंनास ले।
नाथ पद अर्चते मुक्तिकांता मिले।।
तीस चौबीस तीर्थंकरों को जजूँ।
जन्म व्याधी हरूँ सर्व दुःख से बचूँ।।8।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंधादि वसु द्रव्य ले थाल में।
अर्घ्य अर्पण करूँ नाय के भाल मैं।।तीस.।।9।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जयमाला

अनंत दर्शन ज्ञान औ, सुख औ वीर्य अनंत।
अनंत गुण के तुम धनी, नमूँ नमूँ भगवंत।।

(चाल-हे दीनबंधु.....)

जैवंत तीर्थंकर अनंत सर्वकाल के।
जैवंत धर्मवंत न हो वश्य काल के।।
जै पाँच भरत पाँच ऐरावत में हो रहे।
जै भूत वर्तमान औ भविष्य के कहे।।1।।

इस जंबूद्वीप में हैं भरत और ऐरावत।
इन दो ही क्षेत्र में सदा हो काल परावृत।।
जो पूर्वधातकी औ अपर धातकी कहे।
इन दोनों में भी भरत ऐरावत सदा कहे।।2।।

वर पुष्करार्ध पूर्व अपर में भी दोय दो।
हैं क्षेत्र भरत और ऐरावत प्रसिद्ध जो।।
इस ढाई द्वीप में प्रधान क्षेत्र दश कहे।
षट्काल परावर्तनों से चक्रवत् रहें।।3।।

इनके चतुर्थ काल में तीर्थेश जन्मते।
जो भूत वर्तमान भाविकाल धरंते।।
इस विध से तीस बार हो चौबीस जिनेश्वर।
ये सात सौ हैं बीस कहे धर्म के ईश्वर।।4।।

इनकी त्रिकाल बार बार वंदना करूँ।
मैं भक्तिभाव से सदैव अर्चना करूँ।।
सम्पूर्ण कर्मपर्वतों की खंडना करूँ।
निज 'ज्ञानमती' पाय फेर जन्म ना धरूँ।।5।।

-घत्ता-

जय जय तीर्थंकर, धर्मचक्रधर, भवसंकटहर तुमहिं भजूँ।
जय तीन रतनधर, जिनसंपति वर, अनुपम सुख को नित्य चखूँ।।6।।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-गीता छंद-

जो तीस चौबीसी जिनेश्वर की सदा पूजा करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें।।
वे पंच परिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमती' युत पाय निजसंपत्ति वरें।।7।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. ५

भगवान ऋषभदेव समवसरण पूजा

अथ स्थापना-अडिल्ल छंद

समवसरण जिन खिले कमलसम शोभता।
गंधकुटी है मानों उसमें कर्णिका।।
ऋषभदेव के समवसरण की अर्चना।
मनवांछित फल देती प्रभु की वंदना।।1।।

-दोहा-

अनंत चतुष्टय के धनी, तीर्थंकर आदीश।
आह्वानन कर मैं जजूँ, नमूँ नमूँ नत शीश।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडित-श्रीऋषभदेवतीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडित-श्रीऋषभदेवतीर्थंकर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडित-श्रीऋषभदेवतीर्थंकर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक –चाल-नंदीश्वर पूजा

जिनवचसम शीतल नीर, कंचन भृंग भरूँ।
मैं पाऊँ भवदधि तीर, जिनपद धार करूँ।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन तनु सम सुरभित गंध, कंचन पात्र भरूँ।
मैं चर्चूं जिनपद पद्म, भव संताप हरूँ।।

जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन ध्वनि सम अमल अखंड, तंदुल थाल भरूँ।
मैं पुंज धरूँ जिन अग्र, सौख्य अखंड भरूँ।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन यश सम सुरभित पुष्प, चुन चुन कर लाऊँ।
जिन आगे पुष्प समर्प्य, निज के गुण पाऊँ।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय कामबाण-विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन वच अमृत के पिंड, सदृश चरु लाऊँ।
जिनवर के निकट चढ़ाय, समरस सुख पाऊँ।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन तनु की कांति समान, दीपक ज्योति धरे।
मैं करूँ आरती नाथ, मम सब आर्त हरे।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन यश सम सुरभित धूप, खेऊँ अग्नी में।
हो अशुभ कर्म सब भस्म, पाऊँ निज सुख मैं।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवच सम मधुर रसाल, श्रीफल फल बहुते।
जिन निकट चढ़ाऊँ आज, अतिशय भक्तियुते।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन आदि मिलाय, अर्घ बनाय लिया।
निज पद अनर्घ के हेतु, आप चढ़ाय दिया।।
जिन समवसरण की भूमि, अतिशय विभव धरे।
जो पूजें जिनपदपद्म, वे निज विभव भरें।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

शांतीधारा मैं करूँ, जिनवर पद अरविंद।
आत्यंतिक शांती मिले, प्रगटे सौख्य अनिंद।।10।।

शांतये शांतिधारा।

लाल श्वेत पीतादि बहु, सुरभित पुष्प गुलाब।
पुष्पाँजलि से पूजते, हो निजात्म सुख लाभ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जयमाला

-दोहा-

चिन्मय चिंतामणि प्रभो, गुण अनंत की खान।
समवसरण वैभव सकल, वह लवमात्र समान।।1।।

-शंभुछंद-

जय जय तीर्थंकर क्षेमंकर, तुम धर्मचक्र के कर्ता हो।
जय जय अनंतदर्शन सुज्ञान, सुखवीर्य चतुष्टय भर्त्ता हो।।
जय जय अनंत गुण के धारी, प्रभु तुम उपदेश सभा न्यारी।
सुरपति की आज्ञा से धनपति, रचता है त्रिभुवन मनहारी।।2।।
प्रभु समवसरण गगनांगण में, बस अधर बना महिमाशाली।
यह इंद्र नीलमणि रचित गोल, आकार बना गुणमणिमाली।।
सीढ़ी इक एक हाथ ऊँची, चौड़ी सब बीस हजार बनी।
नर बाल वृद्ध लूले लंगड़े, चढ़ जाते सब अतिशायि घनी।।3।।
पहला परकोटा धूलिसाल, बहुवर्ण रत्न निर्मित सुंदर।
कहिं पद्मराग कहिं मरकतमणि, कहिं इन्द्रनीलमणि से मनहर।।
इसके अभ्यंतर चारों दिश, हैं मानस्तंभ बने ऊँचे।
ये बारह योजन से दिखते[1], जिनवर से द्विदश गुणे ऊँचे।।4।।
इनमें चारों दिश जिनप्रतिमा, उनको सुरपति नरपति यजते।
ये सार्थक नाम धरें दर्शन से, मानो मान गलित करते।।
इस समवसरण के चार कोट, अरु पाँच वेदिकायें ऊँची।
इनके अंतर में आठ भूमि, फिर प्रभु की गंधकुटी ऊँची।5।।
इस धूलिसाल अभ्यंतर में है, भूमि चैत्य प्रासाद प्रथम।
एकेक जैनमंदिर अंतर से, पाँच-पाँच प्रासाद सुगम।।
चारों गलियों में उभय तरफ, दो दोय नाट्यशालायें हैं।
अभिनय करतीं जिनगुण गातीं, सुर भवनवासि कन्यायें हैं।।6।।
फिर वेदी वेढ़ रही ऊँची, गोपुरद्वारों से युक्त वहाँ।
द्वारों पर मंगलद्रव्य निधी, ध्वज तोरण घंटा ध्वनी महा।।

फिर आगे खाई स्वच्छ नीर, से भरी दूसरी भूमी है।
फूले कुवलय कमलों से युत, हंसों के कलरव की ध्वनि है।।7।।

फिर दूजी वेदी के आगे, तीजी है लताभूमि सुन्दर।
बहुरंग बिरंगे पुष्प खिले, जो पुष्पवृष्टि करते मनहर।।
फिर दूजा कोट बना स्वर्णिम, गोपुरद्वारों से मन हरता।
नवनिधि मंगल घट धूप घटों युत, में प्रवेश करती जनता।।8।।

आगे उद्यान भूमि चौथी, चारों दिश बने बगीचे हैं।
क्रम से अशोक वन सप्तपर्ण, चंपक अरु आम्र तरू के हैं।।
प्रत्येक दिशा में एक एक, तरु चैत्यवृक्ष अतिशय ऊँचे।
इनमें जिनप्रतिमा प्रातिहार्ययुत, चार चार मणिमय दीखें।।9।।

इसके आगे वेदी सुन्दर, फिर ध्वजाभूमि ध्वज से शोभे।
फिर रजतवर्णमय परकोटा, गोपुरद्वारों से युत शोभे।।
फिर कल्पवृक्ष भूमी छट्ठी, दशविध के कल्पवृक्ष इसमें।
प्रतिदिश सिद्धार्थ वृक्ष चारों, हैं सिद्धों की प्रतिमा उनमें।।10।।

चौथी वेदी के बाद भवनभूमी सप्तमि के उभय तरफ।
नव नव स्तूप रत्न निर्मित, उनमें जिनवर प्रतिमा सुखप्रद।।
परकोटा स्फटिकमयी चौथा, मरकत मणि गोपुर से सुन्दर।
उस आगे श्रीमंडप भूमी, बारह कोठों से जनमनहर।।11।।

फिर पंचम वेदी के आगे, त्रय कटनी सुन्दर दिखती है।
पहली कटनी पर यक्ष शीश पर, धर्मचक्र चारों दिश हैं।।
दूजी कटनी पर आठ महाध्वज, नवनिधि मंगल द्रव्य धरें।
तीजी कटनी पर गंधकुटी पर जिनवर दर्शन पाप हरें।।12।।

जय जय जिनवर सिंहासन पर, चतुरंगुल अधर विराज रहे।
जय जय जिनवर की दिव्यध्वनी, सुनकर सब भविजन तृप्त भये।।
सब जातविरोधी प्राणीगण, आपस में मैत्री भाव धरें।
जो पूजें ध्यावें गुण गावें, वे जिनगुण संपति प्राप्त करें।।13।।

-दोहा-

चतुर्मुखी ब्रह्मा तुम्हीं, ज्ञान व्याप्त जग विष्णु।
देवों के भी देव हो, महादेव अरि जिष्णु।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीऋषभदेवतीर्थंकराय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पाँजलिः।

-नरेन्द्र छंद-

ऋषभदेव के समवसरण को, जो जन पूजें रुचि से।
मनवांछित फल को पा लेते, सर्व दुखों से छुटते।।
धर्मचक्र के स्वामी बनते, तीर्थंकर पद पाते।
केवल 'ज्ञानमती' किरणों से भविमन ध्वांत नशाते।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. ६

श्री चक्रवर्ती भरत सिद्धपरमेष्ठी पूजा

-स्थापना-दोहा -

नाभिराज के पौत्र तुम भरत क्षेत्र के ईश।
अष्टकर्म को नष्ट कर गये लोक के शीश।।1।।
अष्ट द्रव्य से मैं यहाँ, पूजूं भक्ति समेत।
आह्वानन विधि मैं करूँ, परम सौख्य के हेतु।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक-स्रग्विणी छंद

कर्म मल धोय के आप निर्मल भये।
नीर ले आप पदकंज पूजत भये।।
आदि तीर्थेश सुत आदि चक्रेश को।
मैं जजूं भक्ति से आप भरतेश को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह संताप हर आप शीतल भये।
गंध से पूजते सर्व संकट गये।।आदि.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ अक्षय सुखों की निधी आप हो।
शांति के पुंज धर पूर्णसुख प्राप्त हो।।आदि.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम को जीतकर आप विष्णु बने।
पुष्प से पूजकर हम सहिष्णु बने।।आदि.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख तृष्णादि बाधा विजेता तुम्हीं।
सर्व पकवान से पूज व्याधी हनी।।
आदि तीर्थेश सुत आदि चक्रेश को।
मैं जजूं भक्ति से आप भरतेश को।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोष अज्ञान हर पूर्ण ज्योती धरें।
दीप से पूजते ज्ञान ज्योती भरें।।आदि.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्लध्यानाग्नि से कर्म भस्मी किये।
धूप से पूजते स्वात्म शुद्धी किये।।आदि.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण कृतकृत्य हो आप इस लोक में।
मैं सदा पूजहूँ श्रेष्ठ फल से तुम्हें।।
आदि तीर्थेश सुत आदि चक्रेश को।
मैं जजूं भक्ति से आप भरतेश को।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व संपत्ति धर आप अनमोल हो।
अर्घ से पूजते स्वात्म कल्लोल हो।।आदि.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल मिष्ट सुगंध जल, क्षीरोदधि समश्वेत।
तुम पद धारा मैं करूं, तिहुँजग शांती हेतु।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कोटि सूर्यप्रभ से अधिक, अनुपम आतम तेज।
पुष्पांजलि से पूजहूँ, कर्मांजन हर हेतु।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य -**ॐ ह्रीं श्री चक्रवर्तिभरतसिद्धपरमेष्ठिने नमः।**

जयमाला

-दोहा-

निजानंद पीयूषरस, निर्झरणी निर्मग्न।
गाऊँ तुम गुणमालिका, होऊँ गुण सम्पन्न।।1।।

-नरेन्द्र छंद-

चिन्मय ज्योति चिदंबर चेतन चिच्चैतन्य सुधाकर।
जय जय चिन्मूरत चिंतामणि चिंतितप्रद रत्नाकर।।
मरुदेवी के पौत्र आप हे यशस्वती के नंदन।
हे स्वामिन्! स्वीकार करो अब मेरा शत-शत वंदन।।2।।
आदिब्रह्मा ऋषभदेव से विद्या शिक्षा पाई।
संस्कारों से संस्कारित हो आतम ज्योति जगाई।।

भक्ति मार्ग के आदि विधाता सोलहवें मनु विश्रुत।
चौथा वर्ण किया संस्थापित पूजा दान धर्म हित।।3।।

गृह में रहते भी वैरागी जल से भिन्न कमलवत्।
छहों खंड पृथ्वी को जीता फिर भी निज आतम रत।।
वृषभदेव के समवसरण में श्रोता मुख्य तुम्हीं थे।
दिव्य ध्वनी से दिव्यज्ञान पर श्रद्धामूर्ति तुम्हीं थे।।4।।

कल्पद्रुम पूजा के कर्ता दान चतुर्विध दाता।
व्रत उपवास शील के धनी देशव्रती विख्याता।।
श्रावक होकर अवधिज्ञानी राजनीति के नेता।
चातुर्वर्णिक सर्व प्रजाहित गृही धर्म उपदेष्टा।।5।।

दीक्षा ले अंतर्मुहूर्त में केवलज्ञान प्रकाशा।
उत्तम ज्ञान ज्योति में तब ही त्रिभुवन अणुव्रत भाषा।
श्री विहार से भव्य जनों को उपदेशा शिवमारग।
फिर कैलाशगिरी पर जाकर हुए पूर्ण शिव साधक।।6।।

सर्व कर्म निर्मूल आप त्रिभुवन साम्राज्य लिया है।
मृत्यु मल्ल को जीत लोक मस्तक पर वास किया है।।
मन से भक्ति करें जो भविजन वे मन निर्मल करते।
वचनों से स्तुति को पढ़ के वचन सिद्धि को वरते।।7।।

काया से अंजलि प्रणमन कर तन का रोग नशाते।
त्रिकरण शुचि से वंदन करके कर्म कलंक नशाते।।
इस विधि तुम यश आगमवर्णे श्रवण किया है जबसे।
तुम चरणों में प्रीति जगी है शरण लिया है तब से।।8।।

हे भरतेश कृपा अब ऐसी मुझ पर तुरतहि कीजे।
सम्यग्ज्ञानमती लक्ष्मी को देकर निजपद दीजै।।
आप भरत के पुण्य नाम से 'भारतदेश'' प्रसिद्धी।
नमूँ नमूँ मैं तुमको नितप्रति, प्राप्त करूँ सब सिद्धी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीभरतसिद्धपरमेष्ठिने जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-दोहा-

भरतेश्वर की भक्ति से, भक्त बने भगवान्।
आध्यात्मिक सुख शांति दे, करें आत्म धनवान्।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं. ७

भगवान श्रीऋषभदेव के मोक्षप्राप्त १०१ पुत्र-सिद्ध भगवंतों की पूजा

रचयित्री- प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

-स्थापना (शंभु छन्द)-

तीर्थ अयोध्या की धरती पर ऋषभदेव ने जन्म लिया।
उनके इक सौ इक पुत्रों ने, इस धरती को धन्य किया ।।
भरत बाहुबली आदि सभी, पुत्रों ने शिवपद प्राप्त किया ।
इन सबकी पूजन हेतू, हमने पूजन का थाल लिया।।1।।

-दोहा-

पुत्र एक सौ एक का, मन्दिर बना महान।
विश्वशांति मंदिर कहा, अवध धरा का धाम।।2।।
आह्वानन स्थापना, सन्निधिकरण प्रधान।
प्रभु पद में है कामना, करूँ आत्मविश्राम।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठीसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठीसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठीसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं स्थापनं।

-अष्टक (शंभु छन्द)-

सरयू नदि का जल ले करके, प्रभुपद में त्रयधारा कर लूँ।
निज जन्म मृत्यु का क्षय करके, इक दिन प्रभुवर सम सुख वर लूँ।।
प्रभु ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चन्दन कर्पूर मिलाकर, प्रभु पद में चर्चन कर लूँ ।
संसारताप विध्वंस हेतु, ले चन्दन प्रभु अर्चन कर लूँ।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम उज्ज्वल अक्षत ले, जिनवर चरणों में पुंज धरूँ।
वरदान यही चाहूँ प्रभु से, मैं भी अक्षय पद प्राप्त करूँ।।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला गुलाब गेंदा आदिक, पुष्पों को चुन चुन थाल भरूँ।
जिनवर चरणों में चढ़ा उन्हें, निज कामव्यथा को शांत करूँ।।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-श्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतमय मीठे पकवान बना, उनसे पूजन का थाल भरूँ।
जिनवर चरणों में अर्पण कर, निज क्षुधारोग को शांत करूँ।।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतमय दीपक की ज्योति जलाकर, जिनवर की आरति कर लूँ।
मोहांधकार हो जाय नाश, यह भाव हृदय धारण कर लूँ।।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।6।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन अगरू की धूप जला, कर्मों को शीघ्र दहन कर लूँ।
पूजन में प्रभुवर के सम्मुख, आत्मा का भाव प्रगट कर लूँ।।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।7।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

केला अंगूर सरस मीठे, फल थाल सजा पूजन कर लूँ।
इक दिन मुझको फल मिले मोक्ष, प्रभु सम्मुख भाव प्रगट कर लूँ।।
श्री ऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य भरतबाहुबलि-आदिशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प चरू ले, दीप धूप फल थाल भरूँ।
यह अर्घ्य थाल ''चन्दनामती'' प्रभु सम्मुख रख निज सौख्य वरूँ।।

श्रीऋषभदेव के मोक्षप्राप्त, शत एक पुत्र का यजन करूँ।
उन जन्मभूमि शुभ तीर्थ अयोध्या, की धरती को नमन करूँ।।9।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य शतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठियो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। **शान्तये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।**

जयमाला

जय जय तीर्थंकर ऋषभदेव के, श्री चरणों में करूँ नमन।
उनके शिवपद को प्राप्त सभी, पुत्रों के पद में करूँ नमन।।
युग की आदी में नगरि अयोध्या, की धरती का भाग्य जगा।
इन्द्रों के द्वारा वंद्य भूमि पर, महल सर्वतोभद्र बना।।1।।
उस महल में राजा नाभिराय, मरुदेवी सुख से रहते थे।
उनकी सेवा में देव देवियाँ, सदा ही तत्पर रहते थे।।
इक बार महारानी मरुदेवी, ने सोलह सपने देखे।
पति से उनके फल को सुनकर, धन्य हुईं सचमुच ही वे।।2।।
उन सपनों के फल में माँ ने, तीर्थंकर प्रभु को जन्म दिया।
श्री ऋषभदेव ने आदिनाथ, बनकर धरती को धन्य किया।
श्री यशस्वती व सुनंदा दो, कन्याओं के संग ब्याह हुआ।
धरती के सर्वप्रथम राजा से, सारा विश्व सनाथ हुआ।।3।।
अद्भुत संयोग बना ऐसा, प्रभु ने तो शिवपद प्राप्त किया।
उनके सब इक सौ इक पुत्रों ने, भी मुक्ती का लाभ लिया।।
इसलिए सभी की पूजन कर, जयमाल का अर्घ्य बनाया है।
भरतादि एक सौ एक प्रभू की, छवि को मन में बसाया है।।4।।
भरतेश प्रथम चक्रीश हुए, अरु कामदेव थे बाहुबली।
गणधर पद प्राप्त तृतीय पुत्र, श्रीवृषभसेन जी महामुनी।।
थे पुत्र चतुर्थ अनंतविजय, जो दीक्षा लेकर सिद्ध बने।
पंचम थे पुत्र अनंतवीर्य, जो प्रथम मोक्षगामी प्रभु थे।।5।।
अच्युत नामक थे षष्ठ पुत्र, उनने भी शिवपद प्राप्त किया।
सातवें वीर-वरवीर आठवें, ने भी सिद्धि का लाभ लिया।।

ये आठ नाम आगमवर्णित, पर सबने शिवपथ अपनाया।
पितु के बतलाये पथ पर चल, सबने ही शिवपद को पाया।।6।।
सबने ही सर्वतोभद्र महल में, जन्म लिया कुल धन्य किया।
राजा बनकर सब त्याग दिया, इक्ष्वाकुवंश को धन्य किया।।

इक्ष्वाकुवंश का पावन यह, इतिहास हमें बतलाता है।
चौदह लख नृप की दीक्षा का, क्रम उससे जाना जाता है।।7।।
श्री आदिपुराण से आदिनाथ, भगवान का जीवन पढ़ना है।
राजा भी राज्य त्याग करके, दीक्षा लेते ये समझना है।।
इसलिये अयोध्या तीर्थ पे इक सौ, एक प्रभू का मंदिर है।
तीर्थंकर प्रभु के मोक्षप्राप्त, पुत्रों की प्रतिमा सुंदर हैं।।8।।
श्री गणिनी ज्ञानमती माता की, यही प्रेरणा रहती है।
इतिहास करो साकार धरा पर, यही सदा वे कहती हैं।।
उनकी शिष्या ''चंदनामती'' ने, भाव वही दरशाया है।
जयमाला अर्घ्य चढ़ाने हेतू, पूजन थाल सजाया है।।9।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीऋषभदेवस्य मोक्षप्राप्तशतैकपुत्रसिद्धपरमेष्ठिभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-दोहा-

घाति अघाती नाशकर, मोक्ष गये भगवान।
उनकी भक्ति से मिले, हमें भी आतमज्ञान।।1।।

इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः।

प्रशस्ति

वीर अब्द पच्चीस सौ, इक्यावन जग धन्य।
फाल्गुन वदि षष्ठी तिथी, पूजा संग्रह वंद्य।।1।।
तीर्थ अयोध्या धन्य है, सार्वभौम जिनधर्म।
'गणिनी ज्ञानमती' रचित, देवे शिवपथ मर्म।।2।।
भविजन नित पूजा करो, भरो पुण्य भंडार।
परम अहिंसा धर्म की, सदा रहे जयकार।।3।।

चौबीस तीर्थंकर वंदना

ऋषभदेव से वीर तक, तीर्थंकर चौबीस।
नमूँ अनंतों बार मैं, नमूँ नमूँ नत शीश।।1।।

तीस चौबीसी तीर्थंकर वंदना

तीस चौबीसी तीर्थकर, सभी सात सौ बीस।
नमूँ अनंतों बार मैं, नमूँ नमूँ नत शीश।।3।।

ऋषभदेव के श्री भरत आदि 101 मोक्ष प्राप्त पुत्रों की वंदना

ऋषभदेव के पुत्र सब, भरत आदि शत एक।
दीक्षा ले शिवपद लिया, नमूँ नमूँ शिर टेक।।1।।

श्री भरत चक्री के 923 मोक्ष प्राप्त पुत्रों की वंदना

भरत चक्रि के विवर्द्धनादि-सुत नव सौ तेईस।
दीक्षा ले शिवपद लिया, नमूँ नमूँ नत शीश।।1।।

इक्ष्वाकुवंशीय सिद्धपरमेष्ठी वंदना

-शंभु छंद-

ऋषभेश्वर के इक्ष्वाकुवंश में, चौदह लाख प्रमित राजा।
निज सुत को राज्यसौंप दीक्षा, ले सिद्ध बने शिव के राजा।।
इन अविच्छिन्न सब सिद्धों को, हम मन वच तन से नमते हैं।
हम भी उनके समीप पहुँचें, बस यही याचना करते हैं।।1।।